मुस्लिम समाज की धार्मिक मान्यताएं एवं विश्वास

मुस्लिम समाज की धार्मिक मान्यताएं

इस्लाम धर्म के उदय तथा विकास की चर्चा हो चुकी है जिसमें यह बताया जा चुका है कि इसके प्रवर्तक हजरत मुहम्मद साहब हैं, जिनका जन्म मक्का में 570 ई. में हुआ था तथा उन्हें ज्ञान 610 ई. में 'अलहिरा' में प्राप्त हुआ। अरब की तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार इन्होंने 'इस्लाम' धर्म का प्रचार-प्रसार किया। अरब उस समय भयानक आडंबरों एवं कबीलाई युद्धों में जकड़ा हुआ था। लोग शराब पीकर गालियाँ देते थे, लड़कियों को जिंदा दफना देने के साथ ही जीना खोरी की परंपरा भी जोरों पर थी, बुतों की पूजा होती थी। इन्हीं सब बुराईयों/आडंबरों को दूर करने के लिए इस्लाम धर्म की कुछ मान्यताएं तय की गई। ये मान्यताएं मुख्यत: 5 हैं-

(1) कलमा

कलमा के बगैर इस्लाम में प्रवेश नहीं होता यह मुसलमान की प्रमुख/अनिवार्य मान्यता है। हर मुसलमान को इस पर इमान लाना अनिवार्य माना गया है। इस्लाम धर्म में 'एकेश्वरवाद' पर बल दिया गया है तथा मूर्ति पूजा की सख्त मनाही है।

कलमा यह है-

'ला+इलाह+इल्लल्लाह+मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' इसका अर्थ है "अल्लाह (ईश्वर) के सिवाय दूसरा और कोई पूज्य नहीं है। मुहम्मद साहब उनके रसूल हैं।"[1] यह कलमा (उक्ति) इस्लाम की बुनियाद है। यही वह कलमा है जो मुस्लिम को गैर मुस्लिम से अलग करता है। 'कलमा' का विश्वास इस्लामी धर्म-सिद्धांत के सभी शाखाओं में सम्मिलित है।"[2]

(2) नमाज-

इसको 'सलात' भी कहते हैं। 'नमाज' का इस्लामिक धर्म सिद्धांतों में खासा महत्व है। "नमाज का स्थान इस्लाम में वही है जो हिंदू धर्म में संध्या या ब्रह्म-यज्ञ का। यद्यपि कुरान में 'पंचगाना' या पाँच वक्त की नमाज का वर्णन कहीं नहीं आया है, वह एक प्रकार से सर्वमान्य

Scanned with CamScanner

है।"[1] नमाज ईश्वरीय प्रार्थना है जिसे मुसलमान पर पाँच बार फर्ज (अनिवार्य) किया गया है। पाँच वक्त की नमाज इस प्रकार है-

(क) फज्र (प्रात:)- इसका समय सूर्योदय से 20 मिनट पहले निर्धारित है।

(ख) जुहर या जौहर (दोपहर)- जब सूर्य ढल जाए अर्थात् तीसरे पहर के आरम्भ में होती है।

(ग) अस्र या असिर (अपराह्न)- यह चौथे पहर की आरंभ अर्थात शाम को होती है।

(घ) मगरिब- यह सूर्यास्त के तुरंत बाद होती है।

(ङ) इशा (रात्रि)- रात्रि में पहले पहर के बाद होती है।

इस प्रकार एक दिन में पाँच नमाज अदा करना बताया गया है। 'नमाज' के लिए खड़े होने से पहले व्यक्ति की शुद्धि अनिवार्य होती है इस शुद्धि की प्रक्रिया को 'वजू' कहते हैं। 'वजू' का क्रम निम्न है- "(दोनों कलाई धोना (2) दातवन या केवल जल से मुख धोना (3) पानी से नाक का भीतरी भाग धोना (4) चेहरा धोना (5) कोहनी तक हाथ धोना (6) दोनों भीगे हाथ मिलाकर तर्जनी, मध्यमा और अनामिका से सिर पोंछना। (7) गुल्फ पर्यन्त पैर धोना, पहले दाहिना, फिर बायां। सोने और पेशाब-पखाने के बाद फिर से 'वजू' की आवश्यकता होती है- "मैथुन' के बाद केवल 'वजू' से काम नहीं चलता, उस समय पूर्ण स्नान करना पड़ता है।"[2]

नमाज तीन प्रकार की होती है-

(i) सुन्नत

जो अनिवार्य नहीं है, नमाज पढ़ाने वाले अगुवा के पीछे पढ़े जाने वाले भाग को सुन्नत कहते है।

(ii) फ़र्ज़

अनिवार्य है, फ़र्ज़ या फ़र्द नमाज व्यक्तिगत रूप से पढ़ी जाती है, समूह के साथ 'नमाज' पढ़ने में जो असमर्थ है, उसके लिए 'सुन्नत' (सामूहिक) भी फ़र्ज़ (व्यक्तिगत) हो जाती है।

(iii) वाजिब

यह नमाज ईद या बकरीद पर पढ़ी जाती है।

नमाज में क्या-क्या पढ़ा जाता है निम्न प्रकार समझा जा सकता है। "सबसे पहले वह (एक मुसलमान) खड़ा होता है फिर हाथ ऊपर उठा कर ऐलान करता है 'अल्लाहो अकबर'-

Scanned with CamScanner

अल्लाह सबसे महान है।' इस प्रकार वह अल्लाह के अतिरिक्त बाकी सबसे सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है, और खुद को पूर्णतया अपने मालिक के हवाले कर देता है, वह हाथ बाँध कर नरमी से झुक जाता है.... और फिर ऐलान करता है- 'मेरा महान पालन-हार तमाम त्रुटियों से पाक है।' फिर वह अल्लाह का शुक्र अदा करने के लिए खड़ा हो जाता है, फिर विनम्रता पूर्वक धरती पर झुककर माथा टेकते हुए यह एलान करता है कि 'पाक है पालनहार मेरा सबसे महान।'....नमाज में वह अल्लाह का अभिवादन करता है। 'सारी श्रद्धाएँ सारी उपासनाएँ, प्रशंसाएं व पवित्रताएं बस अल्लाह के लिए है। शांति हो आप पर ऐ नवी, और अल्लाह की रहमत और उसकी बरकतें, शांति हो हम पर, अल्लाह के नेक बंदों पर।"[1]

हिंदू धर्म में जिस तरह स्त्रियों को मासिक धर्म तथा प्रसूति के दौरान, पूजा-पाठ तथा मंदिर प्रवेश वर्जित है, वैसे ही "इस्लाम में भी मासिक धर्म तथा प्रसूति के दौरान स्त्रियों को नमाज से छूट दी गई है।"[2]

(3) रोजा

इस्लाम धर्म के मौलिक सिद्धांतों में रोजा का विशिष्ट महत्व है। "एक मोमिन की धार्मिक जिम्मेदारी यह है कि वह रमज़ान में महीने भर तक रोज़े रखे। भोर के समय से लेकर सूर्यास्त तक कुछ खाना पीना सब वर्जित है।...रोजे की अवधि में आदमी को काम-वासनाओं की तृप्ति के बारे में भी नहीं सोचना चाहिए....वास्तव में रोज़ा एक कठिन अभ्यास है...रोजे पूरे एक माह तक लगातार रखे जाते हैं।"[3]

इस्लाम में महीने चाँद के अनुसार निर्धारित होते हैं। इसलिए 'रमजान' (रोजे का महीना) का महीना वर्ष के सभी मौसमों जाड़ा, गर्मी, बरसात में घूमता रहता है। रमजान में रोज़ा रखने के स्त्री, रोगी तथा बूढ़े व्यक्ति के लिए अलग-अलग विधान हैं। जैसा नमाज में होता है, वैसे ही स्त्रियों को प्रसव एवं मासिक धर्म के दौरान रोज़ों से छूट ही गई है, लेकिन अंतर यह है कि उनको इतने ही दिनों के रोज़े बाद में रखने होंगे। यही नियम बीमारों के लिए भी है, लेकिन बुढ़ापे की अवस्था में रोज़ों की पाबंदी नहीं रहती"[4]

Scanned with CamScanner

रोजे के बारे में कहा जाता है कि इससे मनुष्य के विचारों में बदलाव आता है। चूंकि रोज़ा आँख, कान, नाक अर्थात् शरीर के प्रत्येक अंग का होता है, इसलिए कोई व्यक्ति किसी भी शरीरांग से कोई गलत काम करता है तो उसे गुनाह माना जाएगा। रोजे के पश्चात रात में पढ़ने की परंपरा है, तत्पश्चात कुरान सुनाया जाता है।

(4) जक़ात

इस्लाम में जक़ात का अपना महत्व है। कुरान शरीफ़ में जक़ात के बारे में यह है कि प्रत्येक मुसलमान को अपनी वार्षिक आय का कुछ हिस्सा दान में देना अनिवार्य है। कुरान में स्पष्ट उल्लेख है कि "और यह जान लो, तुम्हें जिस वस्तु से लाभ प्राप्त हो, उसका पाँचवा भाग अल्लाह, रसूल, रसूल के परिवार जनों, पितृविहीनों, निर्धनों और परदेशी यात्रियों के लिए है।"[1]

आज के संदर्भ में जक़ात का अर्थ बस इतना ही समझा जाता है कि अपनी जमा पूँजी में से एक छोटा हिस्सा गरीबों को दान करना ही जक़ात है लेकिन इस्लाम के आरंभिक काल में जक़ात का अर्थ टैक्स था जो एक "मुस्लिम राज्य अपने वाशिंदों से वसूल करता था.....आरंभ में सारा जक़ात कर सीधा सरकारी खजाने में जमा कराना होता था।"[2] बाद में इस 'जक़ात' का स्वरूप 'दान देने' के अर्थ में परिर्वतित हो गया। इस्लाम में जकात का प्रावधान गरीब व्यक्तियों के हितार्थ किया गया, जिससे समाज में सभी ठीक से जीवन यापन कर सकें।

(5) हज़

मक्का और मदीना की तीर्थ यात्रा करना हज़ कहलाता है। यह मुस्लिम समाज का अनिवार्य तत्व होते हुए भी सामर्थ्यवान व्यक्तियों के लिए ही उपयुक्त है अर्थात् हज़ केवल उनके लिए है जो मक्का जाने का खर्च उठा सकते हैं । हज़ का अर्थ है 'तीर्थ दर्शन'। इस्लाम को मानने वालों के लिए मक्का और मदीना ही तीर्थ है। जहाँ हज़रत मुहम्मद की पैदाइश और मृत्यु हुई।

हज़ यात्रा के संदर्भ में यह बात महत्वपूर्ण है कि वह जैसे ही मक्का के पवित्र क्षेत्र में पहुँचता है। उसे अपना आम दिनों वाला वस्त्र उतार कर एक विशेष वस्त्र धारण करना पड़ता है जिसे 'एहराम' कहते हैं। यह एहराम वस्त्र "भिक्षुक का वस्त्र है- चादर के दो टुकड़े, एक लुंगी

Scanned with CamScanner

बना दूसरा कंधे से लपेट लिया और पाँव में चप्पल या जूते।"[1] यह वस्त्र केवल पुरुषों के लिए है स्त्रियों के लिए नहीं। वहाँ पहुँच कर हज़ यात्री नारा लगाते हैं कि "ऐ मेरे अल्लाह! मैं हाजिर हूँ। तेरा कोई भागीदार नहीं, मैं प्रस्तुत हूँ। सारी तआरीफ और नैअमतें तेरे लिए जेवा हैं। हुकूमत और बादशाही भी तेरा कोई भागीदार नहीं।"[2]

इस प्रकार इस्लाम की इन पाँच मान्यताओं को उपर्युक्त संदर्भों में ही समझा जा सकता है। इनकी प्रक्रिया जटिल होते हुए भी समाजोन्मुखी है। वैसे भी कोई धर्म समाज को छोड़कर किसी धार्मिक मान्यता का प्रतिपादन नहीं कर सकता। इस्लाम की ये धार्मिक मान्यताएं हिंदू धर्म की मान्यताओं के काफी करीब हैं। रोजा या उपवास की प्रक्रिया हिंदू धर्म में भी है, जिसमें नवरात्रि का 9 दिन के व्रत प्रमुख हैं। इसी तरह तीर्थ यात्रा, दान देना (जक़ात), ईश्वर आराधना (नमाज) इत्यादि की प्रक्रिया हिंदू धर्म से मिलती-जुलती है। आज सांप्रदायिक विभाजन के दौर में इन बातों को रेखांकित किया जाना जरूरी है।

[redacted] मुस्लिम समाज के धार्मिक विश्वास

दुनिया के हर समाज की तरह मुस्लिम समाज के भी अपने कुछ धार्मिक विश्वास हैं। मुस्लिम समाज को समझने के लिए उन धार्मिक विश्वासों का उल्लेख जरूरी है।

1. कुरान

कुरान मुस्लिम समाज का एक पवित्र ग्रंथ है। "उसमें अल्लाह के द्वारा अपने पैगम्बर को दिया गया दैवी संदेश निहित है। कुरान 114 अध्यायों (सूरा) का ग्रंथ है। कुरान में लगभग 6000 आयतें हैं।"[3] ये मुहम्मद साहब पर 'हिरा' नामक गुफा में उतरना प्रारंभ हुई थी। कुरान में लगभग 200 आयतें विविध सिद्धांतों से संबंधित हैं और लगभग 80 आयतें विवाह, मेहर, तलाक और विरासत से। मुस्लिम समाज इस कुरान में पूर्ण आस्था रखता है। कुरान मूलत: अरबी भाषा में है।

Scanned with CamScanner

इस्लामिक मान्यता के अनुसार "जब हज़रत मुहम्मद की आयु 40 वर्ष की थी, और वे वार्षिक एकांतवास के पाँचवे वर्ष में थे, तभी रमजान के आखिरी पखवाड़े में एक रात फरिश्ते(जिब्रील) ने उनकी सेवा में उपस्थित होकर बताया कि आप को अल्लाह ने तमाम मानव जाति के लिए अपने संदेशवाहक के रूप में चुन लिया है।"[1]...तत्पश्चात कुरान के अवतरण का यह सिलसिला शुरू हुआ, वह 23 वर्षों तक जारी रहा।

2. हदीस

हदीस मुहम्मद साहब द्वारा समय-समय पर दिए गए उपदेशों का संकलन है जिसे उनके अनुयायियों ने लेखनबद्ध किया। इस हदीस पर इस्लाम धर्म के अनुयायी निष्ठा के साथ विश्वास करते हैं क्योंकि हदीस पर विश्वास करना इस्लाम का एक महत्वपूर्ण पहलू है। हदीस में मुहम्मद साहब के उपदेशों के अतिरिक्त जीवनचर्या का भी उल्लेख है। हज़रत मुहम्मद के जरिए ईश्वर का संदेश लोगों तक पहुँचा, इसी कारण वे पैगबंर कहे गए।

3. कयामत

इस्लाम धर्म पुनर्जन्म को भले ही नहीं मानता पर 'कयामत' पर विश्वास करता है। 'कयामत' यानी 'प्रलय' के दिन ईश्वर समस्त ब्रह्माण्ड को मिटा देगा, फिर प्राणियों को नया जीवन प्रदान करेगा, सब ईश्वर के सामने पेश होंगे, सबका लेखा-जोखा तय किया जाएगा। इस्लाम में इस नए जीवन की कल्पना को 'बज़रख' कहा जाता है। कहा जाता है कि मनुष्य को दफ़नाने के उपरांत वह 'कयामत' के दिन पुनः जाग उठेगा, फिर ईश्वर उसके कर्मों का मूल्यांकन कर, उसे 'जन्नत' या 'दोजख' में भेजेगा। 'कयामत' का वर्णन 'कुरान' में भी किया गया है- "जब कयामत आयेगी, चाँद में रोशनी नहीं रहेगी। सूरज व चाँद टूटकर चूर हो जायेंगे, मानव यह न समझ सकेगा, कि वह किधर जाए और ईश्वर को छोड़कर उसकी शरण कहीं नहीं होगी। जब तारे गुम हो जायेंगे, आकाश टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। पहाड़ों की धूल उड़ जायेगी, नबी अपने निर्धारित क्षण पर पहुंचेगे, न्याय का दिन जरूर आयेगा। जब सूर 'तुरही' की आवाज उठेगी, जब तुम उठकर के झुण्ड में आगे बढ़ोगे।"[2]

इस कयामत के दिन को न्याय का दिन भी कहा गया है, 'कुरान' का उपर्युक्त 'कयामत' का वर्णन हिंदू धर्म के महाप्रलय वर्णन से मेल खाता है।

Scanned with CamScanner